नई कविता में रसास्वादन

डॉ॰ उषा शर्मा
व्याख्याता.हिंदी साहित्य
राज॰ स्नातकोत्तर महाविद्यालय
राजसमंद

काव्य की आत्मा रस हैए जिसका संबंध आनंद से है। जिस काम में आनंद की भूमिका नहीं वह केवल चमत्कार मात्रा रह जाता है। अतः रस को ही काव्य की आत्मा स्वीकार किया गया है। 'वाक्यम् रसात्मकम् काव्यम्काव्य॰ अर्थात् रसात्मक वाक्य को काव्य कहते हैं। काव्य की यह उत्कृष्ट परिभाषा है। यही रस पाठक या श्रोता को आनंद प्रदान करता है।

आज रंगमंच पर भी आज कवियों का गला स्वर साधना के बल पर निकृष्ट कविता का भी अच्छा प्रभाव डालने में समर्थ रहता है। कवि सम्मेलन किसी काव्य रचना का श्रेष्ठता का मानदंड नहीं है। हमारा विचार यहां नई कविता में रसास्वादन की समस्या से है। बड़े.बड़े विद्वान इस संबंध में केवल अटकल बजी लगा रहे हैं। विद्वानों का मानना है कि नई कविता आकर्षण को ही नहीं विकर्षण को ताटोलती है। व्यंग करनाए चोट करनाए ध्यान में डूबे हुए को जैसे रोक देनाए झकझोर देना उसका स्वभाव है। परंतु क्या इन्हीं विशेषताओं के कारण आज के मशीनी मानव को कविता आकर्षित कर सकती है और यदि आकर्षित कर भीले तो क्या इससे आनंद की अनुभूति होती है। आकर्षक और आनंद दोनों युगपत् हैं। क्या यही आनंद ब्रह्मानंद सहोदर होगा और इसी से काव्य जगत में आज की नई कविता छायावाद के समक्ष ठहराए जा सकती है।

परिवर्तन आवश्यक हैए समय के परिवर्तन के साथ भारतीय कविता ने स्वतंत्रता के पश्चात करवट ली है, किंतु यदि आनंद को तिरोहित कर दिया जाए तो क्या छायावादी कविता के समान स्तर तक पहुंच पाती है। यदि परिवर्तन सूचक इस नई कविता को रस युक्त मान लिया जाए यह हमें निम्न बिंदुओं के आधार समझना होगा.

क. नई कविता की कवि काव्य के घिसे बिम्बों से संतुष्ट नहीं है। नई चेतना की अभिव्यक्ति
के लिए नवीन बिम्ब चाहता है।

ख. नई कविता में पार्थिव जगत की समग्रता का बोध है

ग. पुराने मूल्यों का विघटन और नए मूल्यों का ग्रहण 'व्यक्ति की खोज॰' है।

घ. नई कविता भावों की अभिव्यक्ति के लिए नवीन लय और भाषा का अन्वेषण करती है।

नई कविता ने नवीन बिम्बों का सृजन हुआ है जो व्यक्ति के आसपास के वातावरण से ही ग्रहण किए हैं। इंजन की हेडलाइट सा सूरजए बल्ब से तारेए एक रिकॉर्ड सी बनती हुई जिंदगीए सांझ सी वीरानीए सड़ा हुआ नारियलए खाली.खाली मस्तकए झील किसी कामिनी के चु पड़े नयन सीए नाव जिसमें सपने सी बहती हैए धूप बाहकी बाहकीए शराब आसमानी आदि विभिन्न प्रकार के बिम्ब नई कल्पना के साथ नवीन रूपों में उपमान और रूपक को गढ़ते हुए प्रस्तुत किए हैं।

आलोचक शिवदान सिंह चौहान ने लिखा है 'नए प्रयोग क्या जीवित सत्य को अभिव्यक्ति देते हैं. इसके लिए हमें केवल यही नहीं देखना चाहिए कि जीवन में किसी अनुभव की पुनरू सृष्टि करने में वह कितने सक्षम हैंए बल्कि यह कि उस अनुभव की मानवीय वस्तु कैसी है उस कला में किस प्रकार का अनुभव व्यक्त हुआ हैय अर्थात अपने समय के समग्र सामाजिक जीवन की अपेक्षा वह अनुभव कितना सारवान और संगत हैए उसमें व्यक्त भावनाएं और विचार कितने मानवीय है, किस प्रकार के मनुष्यों को कला में प्रविष्ट किया गया हैए और अंत में हमें देखना चाहिए कि नए प्रयोग जीवन का जो आकलन करते हैं वह

कैसा है अर्थात समाज के भीतर मानव. संबंधों के बारे में लेखक या कलाकार का दृष्टिकोण क्या हैध् यह कतिपय कसोटियां है जिन पर किसी भी नए प्रयोग को परखना आवश्यक है। इन प्रश्नों को बिना उठाए. केवल प्रयोग को अत्यधिक महत्व देनाए चूंकि प्रयोग निरंतर होते आए हैं. परंपरा से ही विच्छेद करना नहीं हैए बल्कि पाठकों से भी विच्छेद कर लेना है और प्रयोग को भी निरर्थक बना देना है।[1] यहां यही समझ में आता है कि कवि जो लिख रहा है उसकी अनुभूति सामाजिक होनी चाहिए तभी उसकी अभिव्यक्ति होगी। वह भावरुप बनकर जन.जन तक कविता के भाव को पहुंचा सकता है। दूसरी ओर उलझी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति और उनको पाठक तक शब्दों के द्वारा पहुंचने की समस्या भी यहां उपस्थित होती है और भाषा का अपना धर्म एवं आचरण तथा संस्कृति होती है यहां संस्कृति से तात्पर्य भारतीय संस्कृति की झलक है। 'साहित्य संस्कृति और भाषा तीनों एक स्तर पर समान हो तभी आनंद आता है।[2] जिस प्रकार प्रयोगवादी कविता भाषा को पर्याप्त न मान कर विराम संकेतए अंकों और सीधी तिरछी लकीरोंए छोटे.बड़े टाइपए उल्टे सीधे अक्षरोंए लोगों और दूसरे स्थान के नामए अधूरे वाक्य का उपयोग कर अपने भावों को पाठक तक पहुंचाने का प्रयोग करते हैं। किंतु यह कविता शायद यांत्रिक मस्तिष्क में मुश्किल से बैठती है।

नए कवियों की यह शाब्दिक कलाबाजिया कविता में रसास्वादन की समस्या उत्पन्न करती है। सिद्धांत रूप में यह कवि कविता को सरल एवं स्वाभाविक भाषा में व्यक्त करके जन.जन तक पहुंचाना तो चाहता हैंए किंतु उसे व्यक्ति परक कुंठाओं एवं दिमागी कसरत से ऐसा कठिन बना देते हैं कि साधारण पाठक समझ ही नहीं सकता। उसके लिए इस शाब्दिक जंजाल में उलझन के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। ऐसी स्थिति में रस की स्थिति का प्रश्न कैसे हो सकता है। जब कविता में रस ही नहीं है तो उसके आस्वादन की समस्या भी नहीं रहती।

रस काव्य की आत्मा है। कविता के रचनाकार विचारों को अधिक महत्व देते हैं। यहां डॉक्टर जगदीश गुप्ता का कथन विचारणीय है 'इस विषय युग के कवि की दृष्टि रस निष्पत्ति की और नहीं जाती और अधिकांश ते नई कविता का लक्ष्य प्रसन्न होती करना नहीं है।[3] वरन् उसका लक्ष्य 'विचार संयुक्त भावाभिव्यक्ति द्वारा मानव व्यक्तित्व के प्रति अधिक आत्मविश्वास उत्पन्न करना है।[4] यहां यह स्पष्ट होता है कि गुप्त जी के मतानुसार आज कवि रसवादी के स्थान पर बुद्धिवादी हो गया और बुद्धिजीवी के लिए यह संभव नहीं की यथार्थ की अपेक्षा कर सौंदर्य बोध से पूरी तरह समझौता कर ले। उसका सौंदर्य बोध तो भावात्मकता के साथ.साथ बौद्धिकता का संतुलित समावेश ही है।

ऐसा माना जाता है कि फ्रस्ट्रेशन वाला नई कविता का कवि गहरी निराशा में डूबा अस्वस्थ दृष्टिकोण लेकर चलता है और पाठक में आत्मविश्वास जागृत करना चाहता है। दोनों विरोधी बातें इसीलिए नई कविता के कवि ने भाषा के नवीन प्रयोग किए हैं जिसमें विचारों को उलझा कर रखने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। नई कविता की आतिशय गद्यात्मकता एवं अस्पष्टता उसे काव्य क्षेत्र से बाहर घसीटती है। नई कविता के समर्थक रस के संबंध में उसके आस्वादन के संबंध में नई थ्योरी करने का प्रयत्न करते दिखाई देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस कविता को समझने के लिए केवल हृदय की नहीं बल्कि दिमाग की भी आवश्यकता है। इन कवियों ने दिमाग की कसरत के साथ.साथ आत्मविश्वास जगाने का जो प्रयत्न किया है. वह विरोधाभासी दिखाई देता है।

डॉ नगेंद्र के शब्दों में 'नई कविता को नई सिद्ध करने के लिए तर्कों का जाल बिछाया गया है और जाने अनजाने रस सिद्धांत के विषय में मिथ्या कल्पनाएं की गई है। हम अनेक बार स्पष्ट कर चुके हैं कि रस अपने व्यापक अर्थ में मानसिक अनुभूति ही है। इसमें संदेह नहीं की अभिनव प्रतिपादित रस की धारणा अद्वंद या अद्वैत पर आश्रित है और यह भी सत्य है कि संस्कृत काव्यशास्त्र में प्राय वही मान्य हुई है परंतु शैव दर्शन या अद्वैत दर्शन में तो केवल काव्यानंद की ही नहीं आनंद मात्रा की कल्पना इसी रूप में की गई है। रस आनंद में अनुभूति है और आनंद के प्रत्येक रूप की प्रतीति आत्म विश्रांति तथा आत्मा की अद्वंदमयी स्थिति की प्रतीति ही होती है।[5] इस प्रकार रस का मूल आधार अनुभूति शुद्ध मानवीय अनुभूति ही है। इस अनुभूति के स्वरूप के विषय में भी दोनों प्रकार की अवधारणाएं हैं. वह एकांत आनंदमई भी मानी गई है. और सुख दुख आत्मक भी। 'आनंद की व्यंजना नई कविता में भी नहीं है। अनेक कविताएं इसका अकाट्य प्रमाण है। कुछ अतिवादी लेखकों को छोड़कर

अधिकांश ने आनंद तत्व को स्वीकार किया हैए केवल इसकी अनिवार्यता का विरोध किया है। इसका विरोध कहां तक सार्थक है सफल कविता की अनुभूति यानी किसी भी सच्ची अनुभूति की सच्ची अभिव्यक्ति निरानंदमयी या दुखमयी भी हो सकती है। यह एक प्राचीन विवाद है जिसका अपने ढंग से समाधान हम कर चुके हैं कहने का तात्पर्य यह है की नई कविता यदि अनुभूति को आधार मानकर चलती है तो रस से उसकी मुक्ति नहीं है।[6]

'इसका एक कारण नई कविता में कवियों का नया प्रयोग गद्यमयता भी रहा है। इसकी गद्य मयता का आस्वादन करने के लिए सहृदय पाठक भी धैर्य धारण नहीं कर सकता गद्य में भी एक रस होता है लेकिन प्रयोग की होड़ में जो रचनाएं नई कविता के नाम से निर्मित हुई है उसमें गद्य का रस भी नहीं दिखाई देता। नई कविता में असंबद्धता और शब्दों का दुरुपयोग भी आस्वादन में बाधक है। प्रयोग की होड़ में और विचारों की असंबद्धता से विकर्षण ही अधिक उत्पन्न होता है। अतः कहीं कहीं यह श्रेष्ठ काव्य तो क्या साधारण काव्य भी नहीं बन सका.

'धुक.धुकी का सिलसिला जाता रहा

आज महज धुक शेष है

में प्रतीक्षा में खड़ा हूं

धुकी कब आये।[7]

अज्ञेय जी ने कहीं.कहीं विराम चिन्हो के विलक्षण प्रयोगों से अपनी कविता को नया तेवर देना चाहा है .

'धूप .

.....मां की हंसी की प्रतिबिंब सी शिशु. वदन पर हुई भासित नई चीड़ों से कंटीली पार की गिरी श्रृंखला पर।[8]

यहां धूप..... हुई भासित के बीच में हाई फनों की की बीच लंबी पंक्ति संध्याकालीन सूर्य तप की छवि का आभास देती है।

'नई कविता में प्रतीकात्मकता भी चमत्कारी रूप में प्रस्तुत हुई है प्रूफोक ने लिखा है 'कभी.कभी तो सचमुच मैं हास्यास्पद हो जाता हूंए कभी.कभी प्राय मूर्ख ही बन जाता हूं।[9]

निकटतर धंसती हुई छतए आड़ में निर्वेद

मूत्र सिंचित मृत्तिका के वृत में

तीन टांगों पर खड़ा नतग्रीव

धैर्य धन गदहा।

इसे अनपेक्षित हास्य रस नहीं कहें तो क्या कहा जाए। यद्यपि कुछ कवियों की कविताओं ने पाठक को इन नवीन प्रयोग के साथ प्रतिकों को समझने की दृष्टि भी प्रदान की है, जिनमें धर्मवीर भारती का 'अंधा युग[10] और 'कनुप्रिया[10] आज्ञेय की 'नदी के द्वीप[10] 'यह द्वीप अकेला[10] 'टूटा पहिया[10] 'अंधेरे का फूल[10] आदि कविताओं में नई कविता की प्रतीकात्मकता के सौन्दर्य को देख सकते हैं।

समालोचक डॉ. रामविलास शर्मा ने नई कविता की विरुपता की चर्चा इस प्रकार की है. ‘अपने सिद्धांतों और व्यवहार में नए कवियों ने इतने उलझाव पैदा किए हैं कि ‘ज्यों.ज्यों सुरझि भज्यो चहैए त्यों.त्यों अरुझत जाए८ उन्होंने सोचा अपनी बात इतनी स्वाभाविक ढंग से कहीं जाए कि वह छंद.सौंदर्य और शब्द.लय के बंधनों से भी मुक्त हो जाए। उन्होंने छंद सौंदर्य और भावोत्कर्ष का घनिष्ठ संबंध नहीं समझा। नतीजा यह कि उनकी लायहीन कविताएं अस्वाभाविक व्यंजना के नमूने बन गई। उन्होंने शब्द और अर्थ.लय का पल्ला पकड़ा। नतीजा यह कि अपने आचार्य के ही अनुसार खंडित गद्य के टुकड़े प्रस्तुत करने लगे। उन्होंने भाव और विचार के मौलिक अंतर विरोध की कल्पना करलीए बौद्धिकता की दुहाई दी। साथ ही कविता कथन न हो इसके लिए बिंबवाद का सहारा लिया परिणाम यह कि उनकी रचनाओं में भावहीन कथनों की भरमार हो गई।९ फल स्वरुप बिना रस के आस्वादन के नई कविता उस प्राणहीन तरुणी सुहागिन वधू के समान है जिसको फूलों से श्रृंगार करके शमशान में लाया गया है। रूप है किंतु प्राणों के अभाव में चेतना विहीन।

संदर्भ .

1. अज्ञेय. अपने.अपने अजनबी क्ष1961द्व पृ. सं. 61

2. डॉ. जयकिशन प्रसाद. हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियां पृ. सं. 574

3. डॉ. जगदीश गुप्त. आलोचना, अंक. 7

4. डॉ. जगदीश गुप्त. नई कविताए अंक. 3

5. हिंदी आलोचना.विश्वनाथ त्रिपाठीए पृ. सं. 164

6. जय किशन प्रसाद. हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियांए पृ. सं. 577

7. नई कविताए अंक. दो

8ए प्ज जपउम पद कपक ंसउवेज तमसपहपवने ंज उनेज पज जपउम जीम विवस .च्तनतिवबा

9. समालोचक नवंबर 1957 पृ. सं. 71